दैनिक भास्कर

Date:23-03-24

गरीब-अमीर के बीच बढ़ती खाई की क्या वजहें हैं?

संपादकीय

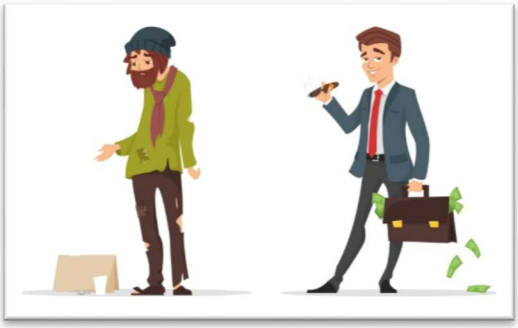

गरीब और अमीर के बीच आर्थिक असमानता को लेकर वर्ष 1961 से अध्ययन करने वाली संस्था की ताजा रिपोर्ट बताती है कि भारत में 50% गरीब और 1% अमीर की आय और संपत्ति के बीच की खाई पिछले 100 वर्षों में आज सर्वाधिक है। यही नहीं, इस समय दुनिया के सबसे अमीर और पूंजीवादी व्यवस्था वाले अमेरिका, फ्रांस और यूके के अलावा चीन, ब्राजील और दक्षिण अफ्रीका से भी ज्यादा भारत के एक प्रतिशत अमीरों की आय में हिस्सेदारी है। रिपोर्ट में विगत 100 वर्षों से ऊपरी और निचले तबके के बीच लगातार बढ़ती आर्थिक असमानता का आकलन है। सवाल सिर्फ यह नहीं है कि भारत का गरीब ब्रितानी हुकूमत में अच्छा था कि 70 साल के स्व- शासन में, बल्कि यह है कि इन सात दशकों में भी गरीब-अमीर की खाई क्यों बढ़ती गई ? अर्थशास्त्र के अनुसार गरीबी स्पेस-टाइम के सापेक्ष आर्थिक स्थिति है। इसमें देश के ही उच्च और निम्न तबकों के बीच पैदा हुए गैप का आकलन किया जाता है। साथ ही यह भी देखा जाता है कि अन्य देश इसी काल-खंड में कहां पहुंचे। संपत्ति का निर्माण पूंजी, तकनीकी और श्रम के मिश्रण से होता है। गरीब के पास पूंजी का अभाव होता है और तकनीकी के ज्ञान के लिए अपेक्षित शिक्षा मुहैया नहीं होती । शारीरिक श्रम की कीमत 200-300 रुपया मात्र होने से गरीबी शाश्वत भाव बन जाती है।

दैनिक जागरण

Date:23-03-24

मुख्यमंत्री की गिरफ्तारी

संपादकीय

आखिरकार दिल्ली के मुख्यमंत्री एवं आम आदमी पार्टी के प्रमुख अरविंद केजरीवाल गिरफ्तार कर लिए गए। वह बतौर मुख्यमंत्री गिरफ्तार होने वाले पहले नेता हैं। उनकी गिरफ्तारी इसलिए अधिक चकित करती है, क्योंकि उन्होंने भ्रष्टाचार के खिलाफ अलख जगाकर यह कहते हुए राजनीति में कदम रखा था कि वह नई तरह की राजनीति करेंगे। शराब घोटाले में अपनी गिरफ्तारी के लिए एक हद तक केजरीवाल स्वयं भी उत्तरदायी हैं। उन्होंने प्रवर्तन निदेशालय यानी ईडी की ओर से दिए गए एक के बाद एक नौ समन की अनदेखी की और वह भी बिना किसी ठोस आधार केदिल्ली में नई शराब नीति बनाकर घोटाले को अंजाम देने के आरोपों का सामना कर रहे अरविंद केजरीवाल और उनके सहयोगी अपनी सफाई में कुछ भी कहें, इस नीति को लेकर तब संदेह गहराया गया था, जब घोटाले का शोर उठते ही उसे वापस ले लिया गया था और वह भी तब, जब यह दावा किया गया था कि यह देश की सर्वश्रेष्ठ शराब नीति है। शराब घोटाले में अब तक केजरीवाल के अतिरिक्त दिल्ली के उपमुख्यमंत्री रहे मनीष सिसोदिया और सांसद संजय सिंह गिरफ्तार हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त घोटाले में शामिल बताए जा रहे दिल्ली सरकार के अधिकारी और शराब कारोबारी भी गिरफ्तार हुए हैं। इसी मामले में भारत राष्ट्र समिति की नेता के. कविता भी गिरफ्तार हो चुकी हैं।

पता नहीं शराब घोटाले का सच क्या है, लेकिन इस तथ्य को ओझल नहीं किया जा सकता कि गिरफ्तार लोगों को जमानत नहीं मिली है। केजरीवाल को भी नहीं मिली और मनीष सिसोदिया तो करीब एक वर्ष से जेल में हैं। एक तथ्य यह भी है कि नई शराब नीति के जरिये शराब कारोबारियों को अनुचित लाभ पहुंचाने और घोटाला किए जाने की बात खुद दिल्ली सरकार के मुख्य सचिव ने कही थी। इसी के बाद इस मामले की सीबीआइ जांच शुरू हुई, जिसमें बाद में प्रवर्तन निदेशालय ने भी दखल दिया। शराब घोटाले में अभी तक जो लोग भी गिरफ्तार किए गए हैं, वे धन शोधन निवारण अधिनियम यानी पीएमएलए के तहत गिरफ्तार किए गए हैं। इस अधिनियम के प्रविधान अत्यंत कठोर हैं। इस अधिनियम के तहत गिरफ्तार लोगों को आसानी से जमानत नहीं मिलती। इसी कारण यह आरोप लगता रहता है कि इस अधिनियम के जरिये राजनीतिक विरोधियों का उत्पीड़न किया जाता है। इस पर आश्चर्य नहीं कि केजरीवाल की गिरफ्तारी के बाद ऐसे आरोप आम आदमी पार्टी के साथ-साथ अन्य विपक्षी नेताओं की ओर से भी लगाए जा रहे हैं। भले ही सरकार और ईडी के पास इन आरोपों के संबंध में बहुत कुछ कहने को हो, लेकिन इस केंद्रीय जांच एजेंसी को दिल्ली के शराब घोटाले के साथ अन्य अनेक घोटालों की जांच को यथाशीघ्र अंजाम तक पहुंचाना चाहिए। वास्तव में ऐसा करके ही उन आरोपों से बचा जा सकता है कि मोदी सरकार राजनीतिक कारणों से प्रवर्तन निदेशालय का दुरुपयोग करने में लगी हुई है।

Date:23-03-24

परिवार की महत्ता समझता पश्चिम

क्षमा शर्मा, (लेखिका साहित्यकार हैं)

भूतपूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप रिपब्लिकन पार्टी के उम्मीदवार के तौर पर फिर से चुनाव मैदान में हैं। उनका सामना वर्तमान अमेरिकी राष्ट्रपति जो बाइडन से है। कहा जा रहा है कि ट्रंप चुनाव जीत सकते हैं। कौन जीतेगा और

कौन हारेगा, यह तो वक्त ही बाताएगा, लेकिन ट्रंप की तमाम प्रतिज्ञाओं में से एक यह है कि उन्हें अमेरिकी समाज में परिवार चाहिए। अमेरिका में परिवार की वापसे की मांग कोई नई नहीं है। इस मामले में रिपब्लिकन और डेमोक्रेट्स एक ही विचार के दिखते हैं। पूर्व उपराष्ट्रपति अल गैर की पत्नी 1993 से परिवार की वापसी की मुहिम चला रही हैं। अल गौर डेमोक्रेटिक पार्टी से संबंध रखते हैं। वहां के समाजसेवी, मनोवैज्ञानिक, पुलिस अधिकारी, अध्यपक और यहां तक कि बहुत से डाक्टर भी समवेत स्वर में कहते रहे हैं कि मनुष्य के लिए परिवार बहुत जरूरी है। वह अकेला नहीं रह सकता। कुछ दिन पूर्व एक शोध में बताया गया था कि अमेरिका में चार करोड़ लोग अकेलेपन के शिकार हैं। अमेरिका की लगभग 34 करोड़ आबादी को देखते हुए यह बहुत बड़ी संख्या है। विश्व स्वास्थ्य संगठन का कहना है कि अकेलापन दुनिया में सबसे बड़ी महामारी का रूप लेता जा रहा है। बच्चों के लिए परिवार की जरूरत सबसे अधिक बताई जाती है। कहा जाता है कि परिवार में रहते हुए बच्चे अपने मन की बात कह सकते हैं, बड़ों की सलाह उन्हें मिल सकती है। ऐसा न होने पर वे तमाम तरह के अपराधों के शिकार होते हैं। अवसाद में घिरते हैं और नशे के जाल में फंस जाते हैं। जहां बच्चे अकेले हों, वहां के समाज की लचर स्थिति की कल्पना ही की जा सकती है।

जिस परिवार को लेकर पश्चिम इतना लालायित है, उस पर पलीता उस ने लगाया है। पहले हर तर्क से परिवार को पीटा, तरह-तरह के अतिबादी विचारों का डायनामाइट लगाकर उसे तहस-नहस किया और अब कह रहे हैं कि परिवार चाहिए। काश पहले सोचा होता कि परिवार नहीं रहेगा तो आप भी नहीं रहेंगे, लेकिन अतिवादी विचारों का आकर्षण कुछ इसी तरह का होता है कि वह लोगें को जल्द अपने गिरफ्त में ले लेता है। उसके दुष्परिणाम 50-100 साल बाद ही दिखाई देते हैं। इटली में प्रधानमंत्री मेलोनी ने भी परिवार की बात करके ही राजनीतिक बढ़त ली थी। उनका तो नारा ही था, मैं एक आत्मनिर्भर स्त्री है, लेकिन मैं एक माँ हूँ और ईसाई भी हूं यानी आत्मनिर्भरता, परिवार और आपकी आस्था व धर्म एक साथ चल सकते हैं। अमेरिका के साथ पूरे यूरोप में इन दिनों परिवार की बातें हो रही हैं, क्योंकि लोग देख रहे हैं कि परिवार के न रहने की कितनी बड़ी कीमत समाज और सरकारें चुका रही हैं। जो काम परिवार के रहते हुए बहुत आसानी से हो जाते थे, उन सबके लिए लोग सरकारों की तरफ देखते हैं। मैंने खुद अकेले स्त्री-पुरुषों की बड़ी संख्या यूरोप में देखी है। हो सकता है कि उनके पास सभी सुविधाएं हों, लेकिन उनकी सुनने वाला शायद ही कोई हो। वे जैसे सिर्फ दुनिया से चले जाने के इंतजार में हैं। वे बाजारों, सड़कों और घरों में अकेले दिखाई देने हैं। उनकी मुस्कराहट में दीनता छिपी दिखती है। बहुत बार भारतीय लोगों को देखकर वे रुक जाते हैं और अक्सर परिवार के बारे में पूछते हैं। वे इसकी तारीफ करते हैं कि भारत में पारिवारिक मूल्य बहुत पुख्ता हैं। उन्हें यह सच मालूम नहीं कि हमारे यहां भी परिवार की जड़ें हिल रही हैं। इन दिनों उसे एक शोषणकारी तंत्र की तरह खारिज किया जा रहा है।

अपने देश में बहुत से विमर्शकार परिवार को स्त्रियों के लिए सबसे बड़ा संकट मानते हैं। लगता है कि यदि परिवार न हो तो स्त्रियों के जीवन से सारे दुख गायब हो जाएंगे। अकेली स्त्री के जीवन को गुलाबी पिक्चर की तरह दिखाया जा रहा है, जबकि जब भी कोई मुसीबत आती है तो परिवार के लोग ही सबसे पहले बचाने दौड़ते हैं। पश्चिम ने परिवार की संवेदनशीलता और देखभाल की अवधारणा को भी मूल्य में बदलते हुए इसे 'केयर इकोनमी' का नाम दिया है। यह सोचकर ही हैरत होती है कि एक मां अपने बच्चे की देखभाल की कीमत आंके या एक पिता बच्चे के पालन के लिए जो कुछ करता है, उसे पैसे से तौले। ऐसी ही अवधारणाओं ने पश्चिम में परिवार संस्था के परखचे उड़ा दिए ।

बच्चे की आत्मनिर्भरता के नाम पर उन्हें सिखाया जाता है कि उनका जीवन सिर्फ उन्हीं के लिए है। यही कारण है कि बच्चे थोड़े से बड़े होते ही परिवार से पिंड छुड़ा लेते हैं। घर वालों से मिलने आते हैं तो भी कभी-कभार । यही नहीं, बीमारी हारी में भी बुजुर्ग अक्सर खुद के ही भरोसे होते हैं। अफसोस कि अपने यहाँ भी अब यह चलन खूब देखने में आ

रहा है कि बुजुर्ग किसी की जिम्मेदारी नहीं हैं। पश्चिम में कम से कम उनके लिए सरकार की तरफ से बहुत सी सुविधाएं हैं, लेकिन अपने यहां इन बातों पर शायद ही कोई सरकार पूरी तरह ध्यान देती हो । मानवीय गरिमा की रक्षा की बात तो कौन करे वह पश्चिम, जिसने आजादी के नाम पर न जाने कितने नकारात्मक पाठ दुनिया को पढ़ाए, अगर आज परिवार परिवार चिल्ला रहा है तो कोई तो बात होगी। हमारे लिए भी यह समय कुछ सबक लेने का है। याद रखें कि मुसीबत में अपने ही काम आते हैं। हो सकता है, कुछ दोस्त अच्छे हों, लेकिन वे हर वक्त आपके लिए नहीं हो सकते। जबकि माता-पिता, अन्य परिजन चाहे जितने नाराज हाँ, बक्त पड़ने पर सबसे पहले हाजिर होते हैं।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date:23-03-24

गलत सूचनाओं पर रोक

संपादकीय

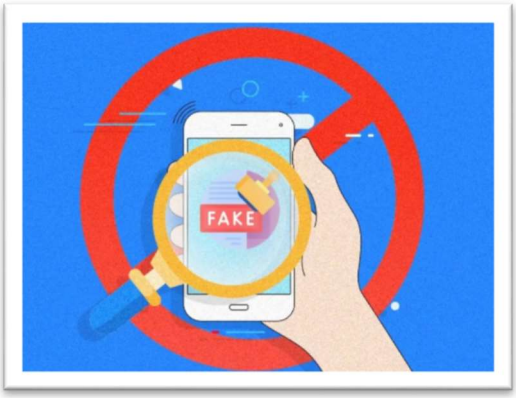

सर्वोच्च न्यायालय ने गुरुवार को उस अधिसूचना पर रोक लगा दी जिसके तहत पत्र सूचना ब्यूरो के अधीन एक फैक्ट चेकिंग यूनिट (तथ्यों की जांच करने वाली इकाई) की स्थापना की जानी थी। न्यायालय ने कहा कि इस पर तब तक रोक रहेगी जब तक बंबई उच्च न्यायालय सूचना प्रौद्योगिकी नियमों में संशोधनों को चुनौती देने वाली याचिकाओं पर फैसला नहीं सुना देता।

इस बीच गूगल और मेटा जैसी डिजिटल क्षेत्र की दिग्गज कंपनियां चुनाव के दौरान गलत सूचनाओं के प्रसार का मुकाबला करने के लिए अपनी रणनीतियों को बेहतर बनाने का प्रयास कर रही हैं। वे जांच के लिए नए टूल विकसित करने और तथ्यों की जांच करने वालों (फैक्ट चेकर) को प्रशिक्षण देने के अलावा दोनों अन्य संस्थानों द्वारा संचालित तथ्यों की जांच संबंधी पहलों में भी शामिल होंगी और भारत निर्वाचन आयोग के साथ तालमेल में काम करेंगी।

2019 में सभी बड़े डिजिटल प्लेटफॉर्मों ने अपने-अपने स्तर पर गलत सूचनाओं को रोकने का प्रयास किया था और उसके मिलेजुले नतीजे सामने आए थे। 2024 में यह अभियान अधिक तालमेल के साथ चलाया जा रहा है। 40 से अधिक बड़े बहुराष्ट्रीय संस्थानों ने म्युनिख सुरक्षा सम्मेलन में एक समझौते पर हस्ताक्षर किए और इस बात पर सहमति जताई कि वे 2024 में वैश्विक स्तर पर मिलकर चुनावों से संबंधित गलत जानकारियों का मुकाबला करेंगे।

जोखिम बहुत बढ़ गया है क्योंकि आर्टिफिशल इंटेलिजेंस अब राजनेताओं से जुड़ी वास्तविक प्रतीत होने वाली दृश्य-श्रव्य सामग्री बना सकता है। इन डिजिटल दिग्गजों को विभिन्न समाचार माध्यमों के साथ तालमेल में काम करना होगा ताकि

भ्रामक सूचनाओं को रोका जा सके, मतदाताओं से हस्तक्षेप सीमित हो सके और विभिन्न प्लेटफॉर्म पर पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित की जा सके।

यह महत्त्वपूर्ण है क्योंकि मेटा के पास फेसबुक, व्हाट्सऐप और इंस्टाग्राम का मालिकाना है जबकि गूगल के पास यूट्यूब और अपना सर्च इंजन है। इससे जुड़ी रणनीतियों में स्वतंत्र फैक्ट चेकर और स्थानीय सामग्री रचनाकारों और प्रकाशकों के साथ जुड़ाव, तथ्यों की जांच, जांच के संसाधन और गलत सूचनाओं को लेकर चेतावनी जारी करने के लिए सहयोगी मंच प्रदान करना शामिल है। इरादा ऐसी सामग्री को वायरल होने से रोकना है। मेटा पहले ही गलत सूचनाओं को हटा देता है।

इसमें मतदान को प्रभावित करने वाली तथा हिंसा को बढ़ावा देने वाली सामग्री शामिल है। उसका दावा है कि उसके पास 15 भारतीय भाषाओं में स्वतंत्र तथ्य जांचने वालों का नेटवर्क है। उसके पास व्हाट्सऐप हेल्पलाइन है जो संदिग्ध जानकारियों को रिपोर्ट करने या उनकी पुष्टि करने में मदद करता है।

गूगल प्रकाशकों के लिए एक साझा भंडार तैयार करेगा ताकि गलत सूचनाओं से निपटा जा सके। कई भाषाओं और स्वरूपों में, जिनमें वीडियो भी शामिल हैं, फैक्ट चेक को साझा किया जाएगा और गूगल के साझेदारों की मदद से उन्हें बढ़ावा दिया जाएगा।

दोनों कंपनियां फैक्ट चेकिंग के उन्नत तरीकों को लेकर प्रशिक्षण का आयोजन करेंगी। इसमें डीप फेक का पता लगाना और गूगल फैक्ट चेक एक्सप्लोरर और मेटा कंटेंट लाइब्रेरी की शुरुआत शामिल है। तथ्यों की जांच करने वाले सामग्री के बारे में कह सकते हैं कि उनसे छेड़छाड़ की गई है। ऐसी सामग्री को छांटकर बाहर कर दिया जाएगा।

फेसबुक का दावा है कि वह गूगल, ओपनएआई, माइक्रोसॉफ्ट, एडोबी और शटरस्टॉक आदि की एआई की मदद से तैयार सामग्री का पता लगाने के लिए उपाय विकसित कर रही है। फेसबुक, इंस्टाग्राम, व्हाट्सऐप और थ्रेड पर अक्सर इन माध्यमों की सामग्री ही प्रकाशित की जाती है।

जरूरत इस बात की भी है कि मेटा पर विज्ञापन देने वाले यह बताएं कि कब वे एआई की मदद से सामग्री तैयार कर रहे हैं। यह सामग्री राजनीतिक या सामाजिक विषयों से जुड़ी हो सकती है। यह उस सामग्री पर रोक लगाता है जिसे फैक्ट चेकर नकारते हैं। वह ऐसे विज्ञापनों को भी रोकता है जो मतदान को हतोत्साहित करते हैं।

अगर गलत सूचनाओं के खिलाफ अभियान को प्रभावी बनाना है तो यह आवश्यक होगा कि झूठी सामग्री का तत्काल पता लगाकर उसे हटाया जाए ताकि वह वायरल न हो सके। ऐसे उपकरणों का बिना किसी पूर्वग्रह के इस्तेमाल करना होगा। फैक्ट चेकिंग के उपायों का दुरुपयोग करके किसी खास राजनीतिक हलके की सामग्री को रोक देना भी आसान हो सकता है। उम्मीद की जानी चाहिए कि ये उपाय तथा ऐसे अन्य उपाय प्रभावी साबित होंगे और उन्हें बिना किसी भय या पक्षपात के लागू किया जाएगा।

Date:23-03-24

देश के शहरों को सशक्त बनाने की जरूरत

नितिन देसाई

भारत की शहरी आबादी कितनी बड़ी है? सन 2011 की जनगणना के मुताबिक शहरों में रहने वाली भारतीय आबादी 31 फीसदी थी। यह आंकड़ा शहरी इलाकों की जनगणना परिभाषा के अनुसार था। इन बसावटों में से करीब 4,000 नगर निगम की सीमा से बाहर थीं और 2011 की जनगणना के अनुसार ये शहरी आबादी का करीब 30 फीसदी थी।

जनगणना और नगर निकाय के तहत आने वाले शहरी इलाकों के बीच अंतर का एक हिस्सा शायद इस बात में निहित था कि संसाधन केंद्रित फैक्टरियां प्राकृतिक संसाधनों के स्रोतों के आसपास स्थापित की जा रही थीं। ग्रामीण इलाकों में भूमि अधिग्रहण की आसानी की वजह से भी फैक्टरियों को नगर निकायों के सीमांत इलाकों में स्थापित किया जाता है। यह तथ्य 2021-22 के सालाना औद्योगिक सर्वेक्षण और 2022-23 के सावधिक श्रम शक्ति सर्वे में भी सामने आया जो दर्शाता है कि विनिर्माण क्षेत्र के करीब 40 फीसदी कर्मचारी ग्रामीण इलाकों में हैं।

विश्लेषकों ने सैटेलाइट से बस्तियों, जमीनी परिदृश्य, रात में जलने वाली बतियों की तीव्रता आदि के आंकड़ों को जनगणना के आंकड़ों से मिलाकर जनगणना के अनुमानों पर प्रश्न खड़ा किया। एक हालिया अनुमान में कहा गया कि कि 2011 में शहरी आबादी कुल आबादी का 43 फीसदी थी, न कि 31 फीसदी जैसा कि जनगणना में अनुमान जताया गया।

बहरहाल इस आंकड़े में जनगणना के गैर कृषि गतिविधियों के शहरीकरण मानकों को शामिल नहीं किया गया जिसमें शहरी क्षेत्रों के 75 फीसदी पुरुष कर्मी आते हैं। इस वजह से गंगा के मैदानी इलाकों में आबादी बहुत अधिक नजर आती है- उत्तर प्रदेश में 55 फीसदी, बिहार में 74 फीसदी और पश्चिम बंगाल में 69 फीसदी। ऐसा घनी आबादी वाली बसावट के कारण हो सकता है।

जनगणना में कम अनुमान वैकल्पिक अनुमान में सुझाए गए 12 फीसदी के बराबर कम नहीं हो सकता है। अब जबकि 2011 को 13 वर्ष बीत चुके हैं जनगणना में शहरी अनुपात 140 करोड़ की कुल आबादी के करीब 37.5 फीसदी होगा। जनगणना के कम अनुमान को ध्यान में रखते हुए शहरी आबादी 55 करोड़ हो सकती है।

शहरी इलाकों के 55 करोड़ लोगों की शहरों और कस्बों के प्रबंधन और विकास में कोई खास भूमिका नहीं होती जबकि वे वहीं रहते हैं और उन्हें नगर निकायों में मताधिकार भी हासिल है। उनमें से कुछ ही लोग ऐसे हैं जिनके नगर निकाय राजकोषीय दृष्टि से स्वतंत्र हैं जो नगर निकाय की गतिविधियों को पूरा कर सकते हैं। अफसरशाहों को मुख्य प्रशासक के रूप में नियुक्त किया जाता है और वही शहरों के प्रबंधन कार्यक्रम तय करते हैं। मुंबई में कई लोग निगम आयुक्त का नाम तो बता लेंगे लेकिन बहुत कम होंगे जो शहर के महापौर का नाम बता सकें।

शहरी विकास कार्यक्रमों का निर्धारण केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा किया जाना जारी है और वहां अनिवार्य रूप से स्मार्ट सिटी प्रोजेक्ट या पुरानी राष्ट्रीय शहरी नवीनीकरण मिशन जैसी परियोजनाएं होती हैं। वे उतनी ही अधूरी हैं जितनी कि अंतरराष्ट्रीय सहायता संगठनों द्वारा तय राष्ट्रीय विकास नीति जो समग्र विकास के बजाय क्षेत्रवार पहलों पर ध्यान देती है।

जरूरत इस बात की है कि निर्णय लेने की जवाबदेही उस स्तर पर होनी चाहिए जहां इसका प्रभाव सबसे अधिक होता है। शहरी इलाकों के संदर्भ में शहरों और कस्बों के लिए प्राधिकार का समुचित स्तर नगर निकाय है।

इसके लिए प्राधिकार का प्रभावी इस्तेमाल करना होगा, नगर निकायों को वित्तीय आवश्यकताओं के लिए उच्च स्तर पर प्राधिकारों पर निर्भर नहीं होना चाहिए। नगर निकायों का संचालन मॉडल नागरिकों की संबद्धता वाला होना चाहिए। सहायकता का सिद्धांत भी इसकी आवश्यकता बताता है।

लब्बोलुआब यह कि नगर निकायों को अधिकार संपन्न बनाया जाए, उन्हें वित्तीय स्वतंत्रता प्रदान की जाए और उनके कामकाज को लोकतांत्रिक बनाया जाए। फिलहाल भारत में ये तीनों ही नजर नहीं आ रहे हैं।

शहरी क्षेत्रों के प्रबंधन के इस तरीके को कई विकसित देशों में देखा जा सकता है। उदाहरण के लिए न्यूयॉर्क शहर में निर्वाचित मेयर को शहर स्तर पर लिए जाने वाले निर्णयों में पूरी आजादी होती है जबकि न्यूयॉर्क राज्य के चुने हुए गवर्नर का प्रभाव सीमित होता है। क्या हम अपने बड़े शहरों को ऐसे अधिकार प्रदान कर सकते हैं?

पहला लक्ष्य है शहरी शासन को लोकतांत्रिक बनाना। निर्वाचित राज्य सरकार के पास उन शहरों के राजनीतिक अधिकार होते हैं जिन पर अक्सर अफसरशाहों का शासन होता है। बहरहाल, एक निर्वाचित नगर निकाय तभी प्रभावी हो सकता है जब वह उच्च स्तर से कम प्रभावित हो।

राजकोषीय स्वतंत्रता अहम है। सन 1992 में 73वें और 74वें संविधान संशोधनों की मदद से शासन के तीसरे स्तर को संवैधानिक दर्जा दिया गया यानी शहरी और ग्रामीण स्थानीय सरकारों को। संविधान के अनुच्छेद 280 में संशोधन करके वित्त आयोग के कार्यक्षेत्र का विस्तार किया गया ताकि अतिरिक्त फंड को एक राज्य के समावेशी फंड में स्थानांतरित किया जा सके और पंचायतों तथा स्थानीय निकायों की जरूरत को अनुदान से पूरा किया जा सके। यह प्रक्रिया 10वें वित्त आयोग से आरंभ हुई। तेरहवें वित्त आयोग ने अनुदानों को अपेक्षाकृत शर्त रहित बनाया और पंद्रहवें वित्त आयोग ने बांटे जाने योग्य कर पूल में तीसरे स्तर की सरकार की हिस्सेदारी को बढ़ाकर तीन फीसदी कर दिया।

क्या हम संविधान में और संशोधन करके एक करोड़ से अधिक आबादी वाले शहरों को एक अलग श्रेणी में डाल सकते हैं जिन्हें उस कर पूल में से अधिक हिस्सा मिले, बजाय कि राज्यों को हस्तांतरित राशि के हिस्से के? क्या उन्हें राष्ट्रीय शहर घोषित करना चाहिए? यह बात ध्यान रहे कि वस्तु एवं सेवा कर ने शहरों से मनोरंजन कर और प्रवेश शुल्क वसूलने का अधिकार छीन लिया।

वे संपत्ति कर लगा सकते हैं और तीसरी श्रेणी के शहरों को अपने संपत्ति कर में उल्लेखनीय इजाफा करना पड़ सकता है क्योंकि विकसित देशों से तुलना करें तो वर्तमान में वह काफी कम है। शहरों के विस्तार की वास्तविकता को देखते हुए एक और प्रशासनिक विकास की जरूरत है ताकि दिल्ली जैसे शहरी परिसर में फरीदाबाद, गाजियाबाद, नोएडा, गुरुग्राम और बहादुरगढ़ तथा मुंबई के साथ नवी मुंबई, भिवंडी तथा कल्याण में नगर निकायों के बीच प्रभावी सहयोग सुनिश्चित किया जा सके। इन्हें तथा ऐसे ही अन्य समूहों को साथ लाने की आवश्यकता है।

शहरी शासन को सशक्त बनाना न केवल शहर के लिए जरूरी है बल्कि राष्ट्रीय विकास के लिए भी आवश्यक है जिसका भविष्य तकनीकी विकास, निर्यात आधारित वृद्धि, डिजिटल सेवा विस्तार और कई अन्य ऐसी पहलों पर निर्भर है जिनके

लिए बेहतर प्रबंधन वाले शहरी क्षेत्रों की आवश्यकता होगी जो उच्च कौशल वाले लोगों और अग्रसोची उपक्रमों को आकर्षित कर सकें।

इसमें न केवल स्थानीय लॉजिस्टिक्स और बुनियादी ढांचे को शामिल करने के लिए बल्कि क्षेत्रीय और राष्ट्रीय जरूरतों के साथ उनका एकीकरण करने के लिए नगर निकाय विकास योजना को नया स्वरूप प्रदान करने की आवश्यकता होगी। इसमें राष्ट्रीय वृद्धि योजना को शामिल करना होगा, खासतौर पर राष्ट्रीय जलवायु प्रबंधन रणनीति में।

इसमें शहरों में हरभरा क्षेत्र तैयार करना, उच्च तापमान से निपटने के इंतजाम करना और जलवायु अनिश्चितता से निपटना तथा समुद्री जल स्तर में इजाफे तथा तूफानों से पार पाने जैसी बातें शामिल होंगी। सबसे बढ़कर रहवासियों की सेवा करने वाली क्षेत्रीय संस्था के रूप में इसे उन बातों पर ध्यान देना होगा जिनके चलते ग्रामीण रहवासी शहरों की ओर आते हैं। इसमें काम के अलावा शिक्षा, स्वास्थ्य और संस्कृति से जुड़ी बेहतर सेवाएं शामिल हैं।

जैसे-जैसे हमारी अर्थव्यवस्था का विकास होगा, अधिक से अधिक भारतीय शहरों में रहने लगेंगे। ऐसे में शहरों को सशक्त बनाना हमारी दीर्घकालिक विकास नीति का अहम हिस्सा होना चाहिए।

जनसत्ता

Date:23-03-24

नाहक जिद

संपादकीय

तमिलनाडु में एक मंत्री को शपथ दिलाने के मामले में वहां के राज्यपाल ने जिस तरह की जिद पकड़ ली थी, वह पहले ही सवालों के घेरे में थी। सुप्रीम कोर्ट ने स्वाभाविक ही उस पर राज्यपाल को फटकार लगाई। गौरतलब है कि राज्यपाल ने द्रविड़ मुन्नेत्र कषगम के नेता के पोनमुडी को मंत्री पद की शपथ दिलाने से इनकार कर दिया था। हालांकि शीर्ष अदालत ने आय से अधिक संपत्ति के मामले में पोनमुडी की दोषसिद्धि और सजा पर रोक लगा थी । इसके बावजूद राज्यपाल ने अपने रुख को नाहक ही प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाया हुआ था । इसी पर सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि राज्यपाल अदालत की अवहेलना कर रहे हैं। अदालत ने केंद्र सरकार से भी पूछा कि अगर राज्यपाल संविधान का पालन नहीं करते, तो सरकार क्या करती है। उसके बाद राज्यपाल द्रमुक नेता को मंत्री पद की शपथ दिलाने को राजी हो गए। सवाल है। कि क्या अब तमिलनाडु के राज्यपाल को अपने पद की मर्यादा के समांतर अपनी जिद और कानूनी स्थितियों पर विचार करने की जरूरत महसूस होगी !

दरअसल, तमिलनाडु सरकार के साथ वहां के मौजूदा राज्यपाल के तल्ख रिश्ते छिपे नहीं हैं। राज्य सरकार ने उन पर कई बार अपने काम में बाधा डालने के आरोप लगाए हैं। कुछ समय पहले जब राज्य सरकार ने राजभवन की ओर से विधेयकों को मंजूरी देने में देरी करने पर सुप्रीम कोर्ट का दरवाजा खटखटाया था, तब अदालत ने साफ कहा था कि राज्यपाल को मंत्रिपरिषद की सलाह पर काम करना चाहिए। ताजा मामले में भी राज्यपाल ने कानून और तकनीकी

पहलुओं का ध्यान रखे बगैर मंत्री को शपथ दिलाने से इनकार कर दिया। राज्यपाल से जुड़ी कुछ संवैधानिक व्यवस्थाएं हैं, जिनका पालन करना इस पद की गरिमा को बनाए रखने के लिए जरूरी है । मगर हाल के वर्षों में कई राज्यों में जिस तरह इस पहलू की अनदेखी होती दिखी है, अगर इसे रोका नहीं गया तो इसका आखिरी नुकसान लोकतंत्र को होगा ।

राष्ट्रीय सहारा

Date:23-03-24

सरकार करें पुनर्विचार

के.सी त्यागी, (सह लेखक विशन नेहवाल आर्थिक चिंतक है)

भारत, जो जीवंत कृषि परंपराओं का देश है, एक विरोधाभास से जूझ रहा है। 2023 में 311 मिलियन टन के साथ दुनिया के दूसरे सबसे बड़े खाद्यान्न उत्पादन का दावा करने के बावजूद, इसे एक महत्त्वपूर्ण भंडारण संकट का सामना करना पड़ रहा है। संयुक्त राष्ट्र के खाद्य और कृषि संगठन (एफएओ) के अनुसार, 2023 में देश का कुल खाद्यान्न उत्पादन 311 मिलियन टन तक पहुंच गया था, लेकिन इसकी वर्तमान भंडारण क्षमता 145 मिलियन टन, जरूरत के आधे से भी कम है।

एक अनुमान के अनुसार भारत को वार्षिक फसल कटाई के बाद खाद्यान में 10 फीसद से 15 फीसद के बीच नुकसान का सामना करना पड़ता है, जो ज्यादातर अपर्याप्त भंडारण सुविधाओं और अकुशल वितरण नेटवर्क के कारण होता है। इसका मतलब है कि हर साल लाखों टन कीमती भोजन बर्बाद हो जाता है, यह एक ऐसी स्थिति है जो तत्काल और अभिनव समाधान की मांग करती है। प्रधानमंत्री ने कुछ दिन पहले देश में खाद्यान्न भंडारण क्षमता की कमी को दूर करने के लिए 'सहकारी क्षेत्र में विश्व की सबसे बड़ी अनाज भंडारण योजना" को मंजूरी दे दी है, जिसे देश के विभिन्न राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में पायलट प्रोजेक्ट के रूप में शुरू किया जा रहा है। मेरी राय में, भारत की बड़े पैमाने पर अनाज भंडारण योजना, कुल मिलाकर लाभकारी होते हुए भी, सभी किसानों, विशेषकर सीमांत और लघु किसानों की जरूरतों को सीधे तौर पर संबोधित नहीं कर सकती है।

कृषि जनगणना (2010-11) के अनुसार, भारत में 81.9 फीसद सीमांत किसान हैं, जिनके पास 2 हेक्टेयर (लगभग 5 एकड़) से कम भूमि है। यह सीमित भूमि स्वामित्व कम उपज मात्रा की और इशारा करता है। इतनी छोटी मात्रा के लिए बड़ी भंडारण सुविधाएं किफायती नहीं हो सकती हैं। ये सीमांत किसान अक्सर तंगहाली में रहते हैं और उनके पास लंबे समय तक अपना अनाज भंडारित करने के लिए वित्तीय संसाधनों की कमी होती है। स्वयं भंडारण स्थान बनाना या किराए पर लेना एक आर्थिक बोझ हो सकता है। बेहतर कीमतों के लिए उपज को रोके रखना उनके लिए कोई विकल्प

नहीं हो सकता है। कई सीमांत किसानों और अच्छी तरह से विकसित कृषि बाजारों के बीच भौगोलिक दूरी भंडारण सुविधाओं तक पहुंच की चुनौती को बढ़ा देती है। इनमें से अधिकांश सीमांत किसान अक्सर अच्छी तरह से विकसित मंडियों (कृषि बाजारों) या खरीद केंद्रों से दूर स्थित होते हैं। वहां तक माल पहुंचने की परिवहन लागत बेहतर कीमतों के लिए अनाज भंडारण के संभावित लाभों से अधिक हो सकती है, खासकर जब कृषि उपज की खराब होने वाली प्रकृति पर विचार किया जाता है। इस प्रकार, अनाज भंडारण के लिए वन फिट फोर ऑल-दृष्टिकोण अनजाने में उन लोगों को बाहर कर सकता है जिन्हें इसकी सबसे अधिक आवश्यकता है। मेरा मानना है कि वास्तव में सीमांत किसानों को सशक्त बनाने और भारत की अनाज भंडारण योजना में उनकी भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए अधिक सूक्ष्म और विकेंद्रीकृत दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

केवल बड़ी भंडारण सुविधाओं पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय, सरकार को उत्पादन के बिंदु के करीब छोटे, ग्रामीण स्तर की भंडारण सुविधाओं के नेटवर्क की स्थापना की संभावनाओं का पता लगाना चाहिए ये विकेंद्रीकृत भंडारण इकाइयां न केवल परिवहन लागत को कम करेंगी बल्कि सीमांत किसानों को भंडारण विकल्पों तक आसान पहुंच प्रदान करेंगी। इसके अतिरिक्त, सहकारी समितियां और किसान उत्पादक संगठन (एफपीओ) भंडारण सुविधाओं के सामूहिक उपयोग को सुविधाजनक बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। संसाधनों को एकत्रित करके और लागत साझा करके व्यक्तिगत किसान बड़े पैमाने की अर्थव्यवस्थाओं से लाभ उठा सकते हैं और भंडारण में वित्तीय बाधाओं को दूर सकते हैं। ऐसी पहल के सफल कार्यान्वयन के लिए सरकार से मौद्रिक सहायता आवश्यक है। बेहतर सड़कों और परिवहन प्रणालियों और मोबाइल खरीद इकाइयों जैसे ग्रामीण बुनियादी ढांचे के विकास में निवेश करने से उत्पादकों और भंडारण सुविधाओं के बीच अंतर को पाटने में मदद मिल सकती है जिससे किसान अपनी उपज के लिए बेहतर कीमतों का लाभ उठा सकेंगे। उत्पादन, भंडारण और बाजार पहुंच के बीच संबंधों को मजबूत करके, भारत एक अधिक समावेशी और लचीला कृषि पारिस्थितिकी तंत्र बना सकता है जो सभी किसानों को सशक्त बनाता है, चाहे उनकी भूमि का आकार कुछ भी हो। असली ताकत भंडारण, बाजार पहुंच और किसान सशक्तिकरण पहल के बीच तालमेल बनाने में निहित है। ग्राम स्तरीय भंडारण इकाइयों का एक नेटवर्क बनाने, सहकारी समितियों और एफपीओ का उपयोग करने और बुनियादी ढांचे के विकास और मोबाइल खरीद इकाइयों के माध्यम से बाजार पहुंच में सुधार करने पर ध्यान केंद्रित करके एक अधिक समावेशी और लचीला कृषि पारिस्थितिकी तंत्र विकसित किया जा सकता है। विकेंद्रीकृत भंडारण नेटवर्क को लागू करने के लिए सावधानीपूर्वक योजना और कार्यान्वयन की आवश्यकता होती है। रसद, रखरखाव और भ्रष्टाचार जैसे संभावित मुद्दों को पहले से ही संबोधित करने की आवश्यकता है। फिर भी, मजबूत सरकारी प्रतिबद्धता, सामुदायिक भागीदारी और मजबूत निगरानी तंत्र के साथ, इन चुनौतियों पर काबू पाया जा सकता है।

बेहतर भंडारण सुविधाएं फसल कटाई के बाद होने वाले नुकसान को कम कर सकती हैं, जिससे बढ़ती आबादी वाले देश के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित हो सकती है भारत की अनाज भंडारण योजना देश के कृषि परिदृश्य को बदलने की अपार क्षमता रखती है। हालांकि यह योजना देश की खाद्य सुरक्षा चुनौतियों का समाधान करने के लिए एक सराहनीय प्रवास का प्रतिनिधित्व करती है, लेकिन इसमें सीमांत किसानों का समावेश सुनिश्चित करने के लिए लक्षित हस्तक्षेप भी होना चाहिए। विकेंद्रीकृत दृष्टिकोण अपनाकर, सहकारी समितियों और एफपीओ के माध्यम से सामूहिक कार्रवाई का लाभ उठाकर और बाजार पहुंच में सुधार करके, भारत उन लोगों का उत्थान करते हुए अपने कृषि क्षेत्र की पूरी क्षमता का उपयोग कर सकता है जो सबसे कमजोर हैं।

Live हिन्दुस्तान.com

Date:23-03-24

राज्यपाल को सन्देश

संपादकीय

तमिलनाडु के राज्यपाल आर एन रवि को अंततः सर्वोच्च न्यायालय की फटकार के बाद नियमों के अनुरूप आचरण के लिए मजबूर होना पड़ा। किसी भी स्तर पर नियमों की अनदेखी किसी न किसी चरण में भारी पड़ती है। तमिलनाडु के राज्यपाल आर एन रवि ने शुक्रवार दोपहर राज्य में सत्तारूढ़ द्रमुक के नेता पोनमुडी को राज्य मंत्रिमंडल में फिर से शामिल कर लिया। तमिलनाडु में जो हुआ, वह बहुत अफसोसजनक है। राज्यपाल ने पोनमुडी को मंत्री पद की शपथ दिलाने से इनकार कर दिया था। पोनमुडी को साल 2011 के एक मामले में दोषी पाया गया था और तीन साल की सजा भी सुनाई गई थी, लेकिन सजा पर सर्वोच्च अदालत ने रोक लगा दी, ऐसे में, पोनमुडी के मंत्रिमंडल में शामिल होने का रास्ता खुल गया था। पोनमुडी की तो सदस्यता भी चली गई थी, पर सजा पर रोक लगने के बाद वह कानूनन योग्य हो गए थे और मुख्यमंत्री को यह पूरा अधिकार है कि वह किसी विधायक को मंत्रिमंडल में शामिल कर सके।

यह बात छिपी नहीं है कि तमिलनाडु की सरकार और वहां के राज्यपाल के बीच खींचातानी लगातार चल रही है। राज्यपाल किसी न किसी नियम या नैतिकता के बहाने राज्य सरकार की राह में अड़चन बनते रहे हैं। इसी मामले में राज्यपाल ने कहा था कि वह पोनमुडी को शपथ दिलाने में असमर्थ हैं, क्योंकि यह सांविधानिक नैतिकता के खिलाफ होगा। वह यह भी कह रहे थे कि सुप्रीम कोर्ट ने केवल सजा पर रोक लगाई है, सजा को पलटा नहीं है। राज्यपाल ने ही राज्य सरकार को सर्वोच्च न्यायालय जाने के लिए मजबूर किया। गुरुवार को प्रधान न्यायाधीश डीवाई चंद्रचूड़ की अगुवाई वाली पीठ ने राज्यपाल रवि पर कड़ा प्रहार किया। यह कहना ही चाहिए कि राज्यपाल को नियमों के तहत पहले ही कार्रवाई करनी चाहिए थी, फटकार का मौका देकर राज्यपाल ने खुद को ही नैतिक रूप से कमजोर किया है। हमारे लोकतंत्र में अनेक परंपराएं दशकों से चली आ रही हैं, ऐसा माना जाता है कि राज्यपाल राज्य सरकार के साथ मिलकर ही काम करेगा। असंतोष जताने के अपने माध्यम हैं, पर राज्य सरकार के किसी फैसले में रोड़ा बनने की नौबत नहीं आनी चाहिए।

तमिलनाडु का यह मामला तमाम राज्यपालों के लिए गौरतलब होना चाहिए। राज्यपाल न सिर्फ राज्य सरकार, बल्कि शीर्ष अदालत के भी प्रतिकूल व्यवहार कर रहे थे और उनके व्यवहार के प्रति सर्वोच्च न्यायालय ने गंभीर चिंता का इजहार किया। खैर, देर से ही सही, राज्यपाल ने अब यथोचित कार्रवाई की है और उन्हें आगे किसी भी तरह के अवरोध में शामिल नहीं होना चाहिए। शुक्रवार को अगर राज्यपाल नहीं मानते, तो सर्वोच्च न्यायालय ने साफ इशारा कर दिया था कि वह कड़े फैसले ले सकता है। ध्यान रहे, राज्यपाल के विरुद्ध पहले भी तमिलनाडु सरकार अदालत का दरवाजा खटखटा चुकी है। यह बात फिर स्पष्ट हुई है किएक बार जब न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि के आदेश को निलंबित कर दिया जाता है, तब कोई दोषसिद्धि नहीं रह जाती है। तब आप यह नहीं कह सकते कि फलां नेता या व्यक्ति दागी है। खैर, एक राज्यपाल पर सांविधानिक लोकाचार को नष्ट करने का आरोप बहुत चिंताजनक है। ऐसी नौबत अब किसी भी राज्य में नहीं आनी चाहिए। सांविधानिक पदों पर बैठे लोगों को अपने आचरण की समीक्षा करनी चाहिए, उन्हें अति उत्साह में भी उसी सीमा तक जाना चाहिए, जहां तक उन्हें देश का संविधान ले जाता है।